International Journal of Humanities and Arts
www.humanitiesjournals.net
Online ISSN: 2664-7702, Print ISSN: 2664-7699; Impact Factor: RJIF 5.26
Received: 12-10-2020, Accepted: 13-11-2020, Published: 17-11-2020
Volume 2, Issue 1, 2020, Page No. 36-42

रहीम और उनके काव्य की आधार–भूमि

डॉ॰ जसवीर त्यागी
एसोसिएट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, राजधानी कॉलेज, राजा गार्डन, दिल्ली, भारत

DOI: https://doi.org/10.33545/26647699.2020.v2.i1a.46

सारांश
मुगलकालीन दरबारी कवि अर्ब्दुरहीम ख़ानखाना ऐसे कवि हैं; जिनके काव्य की आधार भूमि बड़ी व्यापक है, और जिनकी काव्य–संवेदना जन–मन स्पर्शिनी है। रहीम का ऐतिहासिक योगदान यह है कि इन्होंने मज़हब से ऊपर उठकर उदात भाव भूमि पर काव्य रचना की, और दरबारी परिवेश में पले–बढ़े होकर भी साधारण जन और लोक जीवन से सदा जुड़े रहे। रहीम स्वभाव के दयालु, दानी और गुण ग्राहक थे। वे एक साथ क़लम और तलवार के धनी होकर मानवता के पुजारी थे। तुलसी के वचनों के समान रहीम के वचन भी हिंदी भाषी–भू–भाग में पढ़े–लिखे लोगों से लेकर अनपढ़ लोगों के मुँह पर रहते हैं। भारतीय संस्कृति, साहित्य और सामाजिक मर्यादा के कवि रहीम ने नीति, भक्ति और श्रृंगारपरक काव्य की रचना की है। लोकप्रियता की दृष्टि से रहीम की रचनाएँ आज भी प्रासंगिक हैं। रहीम के दोहे मनुष्य को मानवता का पाठ पढ़ाते हैं। प्रस्तुत शोध आलेख में रहीम और उनके काव्य की आधारभूमि पर विचार किया गया है।

मूल शब्दः अकबरी दरबार, सामंती परिवेश, नवरत्न, प्रतिबद्धता, दानशीलता, मानवीय–दृष्टि, सांस्कृतिक–समन्वय, सरसता, भाषिक बहुलता।

सुप्रसिद्ध मुग़ल बादशाह अकबर ने पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक व साहित्यिक स्तर पर हिंदू–मुस्लिम समन्वय, एकता और विशाल मानवीय बोध का परिचय दिया। अकबर ने अपने मंत्रिमंडल में हिंदुओं को भी समुचित स्थान दिया। नोबेल पुरस्कार से सम्मानित विख्यात अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन अपने लेख "Secularism and its Discontents" में अकबर के विषय में लिखते हैं & "The great emperor Akabar, who reigned between 1556 and 1605, was of course deeply intertested in Hindu philosophy and culture, and attempted to establish something of a synthetic religion (the Din-I-Ilahi) drawing on the different faith in India, His court was filled with Hindu as well as Muslim intellectuals, artists, and musicians, and he tried in every way to be non-sectarian and symmetric in the treatement of his subjects".[1]

अकबर ने अपनी नीतिकुशलता, उदारता और दूरदर्शिता से देश की परंपरागत संस्कृति में अहम योगदान दिया। जिससे कला के क्षेत्र में नवीन उत्साह का संचार हुआ। आचार्य रामचंद्र शुक्ल 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में लिखते हैं – "इसमें संदेह नहीं कि अकबर के राजत्वकाल में एक ओर तो साहित्य की चली आती हुई परंपरा को प्रोत्साहन मिला, दूसरी ओर भक्त कवियों की दिव्य वाणी का स्रोत उमड़ चला। इन दोनों की सम्मिलित विभूति से अकबर का राजत्वकाल जगमगा उठा और साहित्य के इतिहास में उसका एक विशेष स्थान हुआ। जिस काल में सूर और तुलसी ऐसे भक्ति के अवतार तथा नरहरि, गंग और रहीम ऐसे भावुक कवि दिखाई पड़े उसके साहित्यिक गौरव की ओर ध्यान जाना स्वाभाविक ही है।"[2]

सम्राट अकबर को हिंदी भाषा से प्रेम था। राजभाषा यद्यपि फ़ारसी थी, तथापि नित्य व्यवहार में हिंदी ही प्रयुक्त होती थी। अकबरी दरबार में हिंदी के अनेक कवियों को विशेष सम्मान प्राप्त था। उनमें अब्दुर्रहीम ख़ान ख़ाना सबसे प्रभावशाली व्यक्ति थे, और जिनका मूर्धन्य स्थान था।

रहीम का विलक्षण व्यक्तित्व

अब्दुर्रहीम ख़ान ख़ाना का जन्म 17 दिसंबर 1556 को लाहौर में अकबर बादशाह के अभिभावक मोगल सरदार बैरम खाँ के घर हुआ था। इनकी माँ हुमायूँ की पत्नी की छोटी बहन थीं। इस तरह रहीम के पिता बैरम खाँ हुमायूँ के साढू और अंतरंग मित्र थे। हुमायूँ ने अपने जीवन काल में ही बैरम खाँ को अकबर का संरक्षक बना दिया था। अतः हुमायूँ के निधन के बाद बैरम खाँ ने राजगद्दी पर अकबर को बैठाकर उसका संरक्षण अपने हाथ में ले लिया। बैरख खाँ राजनीति–निपुण, बुद्धिमान और चतुर होने के साथ महत्त्वाकांक्षी भी था। रहीम जब 5 वर्ष के थे, गुजरात के पाटन नगर में (1561 ई॰) में इनके पिता की हत्या कर दी गयी। अल्पायु में ही पिता की मृत्यु हो जाने के कारण अकबर ने ही इनका पालन–पोषण और शिक्षा–दीक्षा अपनी देखरेख में करवायी थी। रहीम की शिक्षा–दीक्षा बादशाह अकबर की उदार धर्म–निरपेक्ष नीति और सांस्कृतिक समन्वय के अनुकूल हुई। रहीम से प्रसन्न होकर अकबर ने उन्हें 'मिर्ज़ा खाँ' की उपाधि से सम्मानित कर उन्हें अपने नवरत्नों में प्रमुख स्थान दिया था। इस तरह रहीम और मुग़ल वंश के बीच घनिष्ठ पारिवारिक संबंध थे।

हिंदी साहित्य में रहीम का स्थान अग्रगण्य है। रहीम का व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा से संपन्न था। उनके भीतर स्वाभाविक सरलता और जन्मजात प्रतिभा थी। वे क़लम और तलवार के धनी थे। शस्त्र, शास्त्र और लोक–व्यवहार को रहीम ने अपने कर्म, लेखन और जीवन–दर्शन में उतार लिया था। इस तरह रहीम एक योद्धा से ऊपर एक सच्चे सहृदय और स्नेहिल इंसान ज़्यादा दिखाई पड़ते हैं।

रहीम मध्ययुगीन सामंती दरबारी संस्कृति के कवि, सेनापति, प्रशासक, कूटनीतिज्ञ, दानवीर, मानवतावादी, बहुभाषाविद् कला

प्रेमी एवं उच्च कोटि के विद्वान थे। इनके आश्रय में अनेक कवि–कलाकार स्वयं को सुरक्षित सम्मानित पाते थे। केशव, आसकरन, मण्डन, नरहरि और गंग जैसे कवियों ने अपनी कृतियों में इनकी प्रशंसा की है। इनके विषय में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मत है – "ये दानी और परोपकारी ऐसे थे कि अपने समय के कर्ण माने जाते थे : इनकी दानशीलता हृदय की सच्ची प्रेरणा के रूप में थी, कीर्ति की कामना से उसका कोई संपर्क न था। इनकी सभी विद्वानों और कवियों से सदा भरी रहती थी। गंग कवि को इन्होंने एक बार छत्तीस लाख रुपये दे डाले थे। अकबर के समय में ये प्रधान सेनानायक और मंत्री थे और अनेक बड़े–बड़े युद्धों में भेजे गए थे।"[3] स्वभाव से दानशील और काव्य प्रेमी होने के कारण रहीम का यश अपने समय में चारों तरफ़ फैला था। ये शूरवीर थे और अनेक युद्धों में इन्होंने विजय पताका फहरायी थी।

बुद्धि–कौशल और रण–कौशल के साथ–साथ रहीम अपने शारीरिक सौंदर्य में भी आकर्षक और प्रभावशाली थे। इतिहास लेखकों ने जहाँ इनकी कूटनीतिज्ञता, कला मर्मज्ञता, साहित्यिकता की तारीफ़ की है, वहाँ इनके स्वस्थ–सुंदर अवयवों का भी मनोहारी वर्णन किया है। अकबरी दरबार के लेखक आज़ाद ने रहीम की प्रशंसा में लिखा – "रहीम अपने आकर्षक सौंदर्य से स्वजनों को ही नहीं, राह चलते पथिकों को भी आकर्षित करते थे। अनेक युवतियाँ उनके सौंदर्य पर मोहित थीं।"[4] प्रकृति ने रहीम को जो अनुपम रूप–सौंदर्य प्रदान किया था वह वृद्धावस्था तक बना रहा और वे स्वयं भी अपने शिष्ट, शील–स्वभाव से उसकी रक्षा करते रहे।

अकबर ने रहीम को 'खानखाना' की उपाधि प्रदान की, जिसका अर्थ राजाधिराज था। रहीम कला–प्रेमी थे। काव्यकला, संगीत, नाटक, स्थापत्य, चित्रकला आदि ललित कलाओं में रहीम की असाधारण गति थी। जहाँगीर ने रहीम के कला–प्रेम के संबंध में 'तुजुके जहाँगीरी' में लिखा है – "खानखाना योग्यता और गुणों में सारे संसार में अनुपम था। अरबी, तुर्की, फ़ारसी और हिंदी भाषाएँ जानता था। अनेक प्रकार की विद्याओं के साथ भारतीय विद्याओं का अच्छा ज्ञान रखता था। फ़ारसी और हिंदी में बहुत अच्छी कविता करता था। पूज्य पिता (सम्राट अकबर) की आज्ञा से 'वाकेआत बाबरी' का तुर्की से फ़ारसी भाषा में अनुवाद किया था।"[5] रहीम अनेक कलाओं और विधाओं में पारंगत थे। रहीम हिंदी ही के नहीं, बल्कि फ़ारसी के भी श्रेष्ठ कवि थे। इनके विषय में प्रसिद्ध है कि इन्होंने ग्यारह वर्ष की अवस्था में ही काव्य–रचना आरंभ कर दी थी। उस समय के दरबारी कवियों में भाषाविषयक विद्वानों में रहीम का स्थान सर्वोच्च था।

रहीम का जीवन एक ऐसा दुःखांत नाटक है, जिसमें अनेक उतार–चढ़ाव, चरम सीमाएँ और नियति की स्थितियाँ व्याप्त हैं। "रहीम का पारिवारिक जीवन सुखमय नहीं था। बचपन में ही इन्हें पिता के स्नेह से वंचित होना पड़ा। 42 वर्ष की अवस्था में इनकी पत्नी की मृत्यु हो गयी। इनकी पुत्री विधवा हो गयी थी। इनके तीन पुत्र असमय ही कालकवलित हो गये थे। आश्रयदाता और गुण ग्राहक अकबर की मृत्यु भी इनके सामने हुई। इन्होंने यह सब कुछ शांत भाव से सहन किया। इनके नीति के दोहों में कहीं–कहीं जीवन की दुःखद अनुभूतियाँ मार्मिक उद्‌गार बनकर व्यक्त हुई हैं।"[6] जीवन के अनेक घात–प्रतिघात और राजकीय षड्यंत्रों की चपेट में आने के बाद भी, जिस कवि के हृदय का मानवीय रस निःशेष नहीं हुआ उसके हृदय की विशालता, संवेदनशीलता और सरसता का अनुमान सहज ही किया जा सकता है। जीवन के जितने उतार–चढ़ाव रहीम ने देखे, उतना देखने वाले कवि बहुत कम हैं।

रहीम का रचना संसार

रहीम की रचनाओं के विषय में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। जितनी रचनाएँ 'रहीम' या 'रहिमन' नाम से मिलती है, उन सभी को प्रामाणिक कहना कठिन है। कुछ विद्वानों, शोधकर्त्ताओं और प्रतिष्ठित संग्रहकर्ताओं ने इस दिशा में प्रामाणिक कार्य किया है। जिनमें पंडित मायाशंकर याज्ञिक द्वारा सम्पादित 'रहीम रत्नावली', बाबू ब्रजरत्नदास द्वारा सम्पादित 'रहिमन विलास', अयोध्या प्रसाद शर्मा द्वारा सम्पादित 'रहिमन विनोद', विद्यानिवास मिश्र, गोविन्द रजनीश द्वारा सम्पादित 'रहीम ग्रन्थावली' तथा सत्यप्रकाश मिश्र द्वारा 'रहीम रचनावली' उल्लेखनीय हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में लिखा है कि –"अब तक इनके निम्नलिखित ग्रंथ ही सुने जाते थे – रहीम दोहावली या सतसई, बरबै नायिका भेद, शृंगारसोरठा, मदनाष्टक, रासपंचाध्यायी। पर भरतपुर के श्रीयुत मायाशंकर याज्ञित ने इनकी और भी रचनाओं का पता लगाया है – जैसे नगरशोभा, फुटकर बरवै, फुटकर कवित्त सवैये – और रहीम का पूरा संग्रह 'रहीम रत्नावली' के नाम से निकाला है।"[7] आचार्य शुक्ल ने अपने कथन में 'सुने जाते थे' शब्द का प्रयोग किया है और मायाशंकर याज्ञिक की रचना कृति का उल्लेख किया है। इस तरह स्वयं शुक्ल जी ने प्रामाणिकता और अप्रमाणिकता का सवाल उठाया है।

हिंदी साहित्य कोश– भाग–2 में रहीम की रचनाओं के संदर्भ में लिखा है – "कुल मिलाकर इनकी 11 रचनाएँ प्रसिद्ध हैं।"[8] जिनमें दोहावली, नगरशोभा, बरवैनायिका भेद, बरवै, मदनाष्टक तथा खेटकौतुक जातकम् प्रमुख हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य उद्‌भव और विकास' में कहते हैं – "इनके ग्रंथों में रहीम दोहावली, बरवैनायिका भेद, मदनाष्टक और शृंगार सोरठा तथा रास पंचाध्यायी नाम की पुस्तकें प्रसिद्ध हैं।"[9] डॉ॰ नगेन्द्र का मत है कि –"इनकी रचनाओं में दोहावली, नगरशोभा, बरवैनायिका भेद और मदनाष्टक प्रमुख हैं।"[10] इस तरह हम पाते हैं कि रहीम की रचनाओं के विषय में विद्वानों के अलग–अलग मत और विचार हैं। रहीम की निम्नलिखित रचनाएँ प्रसिद्ध हैं और परंपरा में इन्हें रहीम कृत माना जाता है।

दोहावली : रहीम अपने दोहों के लिए सर्वसाधारण में प्रसिद्ध हैं। रहीम रचित ग्रंथों में लोकप्रियता की दृष्टि से दोहावली प्रथम स्थान पर है। कहा जाता है कि इन्होंने सतसई की रचना की थी, किंतु इनके तीन सौ दोहे ही मिलते हैं। तमाम फुटकर दोहों को जोड़ने के बाद भी कुल दोहों की संख्या चार सौ से अधिक नहीं है। इसलिए रहीम के दोहों को 'रहीम सतसई' कहना अनुचित है, क्योंकि इसमें सात सौ दोहे नहीं हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मानना है कि –"रहीम को संसार का बहुत गहरा अनुभव था। ऐसे अनुभवों के मार्मिक पक्ष को ग्रहण करने की भावुकता इनमें अद्वितीय थी। अपने उदार और ऊँचे हृदय को संसार के वास्तविक व्यवहारों के बीच रखकर जो संवेदना इन्होंने प्राप्त की है उसी की व्यंजना अपने दोहों में की है।"[11] जीवन की विविध परिस्थितियों की स्वानुभूति इनके काव्य का प्राण है।

बरवै नायिका भेद : यह रहीम का रीति–ग्रंथ है। इसमें इन्होंने नायिका भेद वर्णन में शास्त्रोकत नायिकाओं के अनुसार उत्तमा, मध्यमा, स्वकीया, मुग्धा, नवोढ़ा, परकीया आदि प्रकारों के अनुसार बरवै छंद लिखे हैं। यह श्रृंगार काव्य है। यह नायिका भेद का सर्वोत्तम ग्रंथ है। इसमें भिन्न–भिन्न नायिकाओं के लक्षण न देकर केवल उदाहरण दिये गये हैं, जिनमें सरलता और सौंदर्य का संगम है। "'बरवै नायिका भेद' में जो मनोहर और छलकते हुए चित्र हैं वे भी सच्चे हैं –कल्पना के झूठे खेल नहीं है। उनमें भारतीय प्रेम जीवन की सच्ची झलक है।"[12] रहीम की 'बरवै नायिका भेद' इतनी सरस रचना है माना जाता है कि तुलसीदास भी उससे प्रभावित हुए थे।

नगर शोभा : 'नगर शोभा' रहीम रचित एक श्रृंगारिक कृति है। यह दोहा छंद में लिखी गयी है। यह 142 दोहों में रचित एक स्वतंत्र पुस्तक है। इसमें विभिन्न पेशेवाली नायिकाओं का श्रृंगार सुरक्षित है। 'नगर शोभा' में जौहरिन, रंगरेजिन, तुरकिन, कैथिन, तेलिन, गूजरी, बरइन, भटियारिन आदि विविध जातियों की स्त्रियों के सौंदर्य–वर्णन के साथ शील–स्वभाव का संकेतात्मक परिचय भी मिलता है। अकबरी दरबार की श्रृंगारिक भावनाओं और 'मीना बाज़ार' की झलक इस कृति में सुलभ है।

बरवै : रहीम का प्रिय छंद बरवै था। इनकी एक रचना 'बरवै' नाम से रचित है। यह एक स्वतंत्र कृति है, और यह भक्तिपरक 101 छंदों का ग्रंथ है। अवधी भाषा में बरवै छंद को दो कवियों ने अधिक महत्त्वपूर्ण पद प्रदान किया है। प्रथम स्थान पर हैं रहीम और द्वितीय स्थान पर तुलसीदास। रहीम की 'बरवै' कृति कृष्ण–भक्ति पर आधारित है। इसमें गोपी–विरह वर्णन भी चित्रित है।

मदनाष्टक : रहीम की एक कृति संस्कृत और हिंदी खड़ी बोली मिश्रित शैली में रचित 'मदनाष्टक' मिलती है। इसका वर्ण्य–विषय कृष्ण रासलीला है। जिनमें गोपियों की प्रेम विहलता, मुरली लीला तथा गोपी विरह का श्रृंगारिक रसात्मक वर्णन है।

श्रृंगार सोरठा : सोरठा छंद की परिभाषा है – दोहा उल्टे सोरठा। दोहा लिखने में सिद्धहस्त रहीम ने सोरठा छंद भी लिखे होंगे, यह अनुमान किया जा सकता है। सोरठा नाम से रहीम की किसी कृति का उल्लेख तो मिलता है, किंतु वास्तव में अभी तक उसकी प्रति सुलभ नहीं है। रहीम ग्रंथावली में छह सोरठे संकलित है, उनकी भाषा और सोरठों में गठित उपनाम 'रहीम' या 'रहिमन' से विद्वान इन्हें रहीम रचित कह सकते हैं। श्रृंगार भाव से प्रेरित होने से इसे श्रृंगार सोरठा कहा है।

खेटकौतुक जातकम् : यह एक ज्योतिष ग्रंथ है। इसकी रचना फ़ारसी मिश्रित संस्कृत में हुई है और इसमें मनुष्य जीवन पर ग्रह–नक्षत्रों के प्रभाव का संक्षिप्त चित्रण है।

रहीम की रचनाओं में 'रास पंचाध्यायी' का उल्लेख भी मिलता है। लेकिन ऐसा कोई ग्रंथ अभी तक प्राप्त नहीं है और न पद ही मिले हैं। रहीम बहुभाषाविद् थे। उनके कुछ भक्ति विषयक स्फुट संस्कृत काव्य के अंतर्गत आते हैं। कुछ श्लोकों में संस्कृत भाषा के साथ हिंदी का प्रयोग भी मिलता है। रहीम रचित कुछ कवित्त, सवैया, दोहा, पद आदि उपलब्ध हैं। ये किसी ग्रंथ में संकलित न होकर फुटकर पदों की श्रेणी में रखे जाते हैं।

रहीम विस्तृत सांस्कृतिक आधार फलक पर जीवन को देखने वाले कवि हैं। रामस्वरूप चतुर्वेदी का मानना है – "भक्तिकाल का वैविध्य कई दृष्टियों से रहीम के कृतित्व से पूरा होता है। मुसलमान और उस पर भी तत्कालीन शासन के अंग होकर वे हिंदू देवताओं का स्तुति–गान करते हैं। शाही दरबार के मान्य सदस्य होते हुए सूफी संतों–भक्तों की कोटि में अपने को जोड़ते हैं।"[13]

मानसिक औदार्य सांस्कृतिक विशालता और धार्मिक उदारता के संदर्भ में रहीम की तुलना गिने–चुने लोगों में की जा सकती है। भारतीय संस्कृति, साहित्य, कला और सामाजिक मर्यादा के गायक कवि रहीम सांस्कृतिक समन्वय के प्रतीक पुरुष थे। रहीम रचनावली के संपादक डॉ॰ सत्यप्रकाश मिश्र का कथन है – "रहीम की कविताएँ 'गाढ़े के साथी' के रूप में हिंदी भाषी जनता के काम आती हैं।"[14] और आगे वे लिखते हैं – रामविलास जी ने उन्हें 'लोक जागरण के कवि' के अंतर्गत रखा है।

रहीम के काव्य की आधार–भूमि

नीति, भक्ति और श्रृंगार, रहीम के काव्य की आधार–भूमि है। इनको रहीम काव्य के मुख्य विषय भी कह सकते हैं। जीवन के अनेक विषयों को संजोकर रहीम ने सरस काव्य–रचना की है, जो इस प्रकार हैं –

नीति : "'नीति' शब्द का तात्पर्य है व्यवहार का ढंग; वह आधारभूत सिद्धांत जिसके अनुसार कोई कार्य संचालित किया जाए या लोक व्यवहार के निर्वाह के लिए नियत किया गया आचार। समाज को स्वस्थ एवं संतुलित पथ पर अग्रसर करने एवं व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिए जिन विधि–निषेधमूलक व्यावहारिक, नियमों का विधान देश, काल और पात्र के संदर्भ में किया जाता है, उसे नीति कहते हैं।"[15]

समाज को स्वस्थ सुंदर बनाने के लिए नैतिक मूल्यों की रक्षा के उद्देश्य से जिस काव्य की रचना होती है, वह नीति काव्य कहलाता है। कुछ विद्वान इसे 'उपदेशात्मक काव्य' भी कहते हैं। नीतिकाव्य का प्रतिपाद्य सदाचार, राजनीति और व्यावहारिक ज्ञान है। रोज़मर्रा के जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए जिन–जिन बातों का ध्यान रखना ज़रूरी है, और जिनके न जानने से मनुष्य मुश्किल में पड़ सकता है, वे सभी बातें नीतिकाव्य का लक्ष्य है।

रहीम की 'दोहावली' में नीति–संबंधी दोहे हैं। रहीम के नीतिपरक दोहे जीवनरस से परिपूर्ण हैं। रहीम दरबारी परिवेश में पले–बढ़े होकर भी लोक–जीवन से पूरी तरह परिचित थे। जीवन और समाज के अनेक विषयों और कथ्यों को समेटकर रहीम ने अपनी 'दोहावली' में लोक–मंगल की भावना से प्रेरित होकर नीति, सदाचार और मर्यादा के अनुकूल दोहों की रचना की है। उनमें शील संरक्षण के उपाय हैं, समय का महत्त्व है, महापुरुषों का वैशिष्ट्य है, कर्त्तव्यपरायणता का संदेश है, मित्रता की कसौटी है, दुष्ट से निपटने का व्यावहारिक मंत्र है, अनुचित कर्म का निषेध है। रहीम ने स्वार्थ–परायणता, आत्म–प्रशंसा, आडम्बर–प्रियता, चिंता, क्षण भंगुरता, माया, ममता, विषय सुख, वैभव के गुण–दोष, संपत्ति–मद से विह्वल लोगों के हृदय का यथार्थ चित्रण नीतिपरक दोहों में किया है। रहीम के नीति के दोहों में जीवन

की सच्ची सलाह है। रहीम दानी और परोपकारी थे। वे अपनी दानशीलता के लिए विख्यात थे। जीवन में आये दुःखों और आर्थिक संकटों में घिर जाने पर रहीम ने कहा – कि जीना तभी तक अच्छा है, जब तक कि दान देना कम न हो। संसार में दान रहित जीवन कुत्सित है। उसे उचित नहीं कहा जा सकता। उनका कथन है–

तबहीं लों जीबो भलो, दीबो होय न धीम।
जग में रहिबो कुचित गति, उचित न होय रहीम।।
(दोहावली, छंद 88)

मित्रता मानवीय संबंधों का आधार है। मित्रता के बल पर मनुष्य जीवन में आयी बाधाओं को हँस कर पार कर लेता है। मित्रता अमूल्य धन है। रहीम कहते हैं कि सच्चे मित्र की परख आपातकाल में होती है –

रहिमन विपदा हू भली, जो थोरे दिन होय।
हित अनहित या जगत में, जानि परत सब कोय।।
(दोहावली छंद–242)

स्वार्थपरता और कपट की भावना मनुष्य के भीतर परोपकार का नाश कर देती है, इसलिए रहीम 'स्वारथ रचत सब औगुन जग माहि' की घोषणा करते हुए छल–कपट से परे रहने की नेक सलाह देते हैं –

रहिमन वहाँ न जाइए, जहाँ कपट को हेत।
हम तन ढारत ढेकुली, सींचत अपनो खेत।।
(दोहावली, छंद–239)

जीवन की विविध परिस्थितियों की स्वानुभूति इनके नीति काव्य का प्राण है। रहीम अमीर भले ही रहे हों पर उनकी दृष्टि में सदा ग़रीब और साधारण लोग ही रहते थे। वे छोटे–से–छोटे आदमी को भी महत्त्व देते हुए उसकी अहमियत समझते थे – यही उनका बड़प्पन था। रहीम का यह दोहा इस बात का प्रमाण है–

रहिमन देखि बड़ेन को, लघु न दीजिए डारि।
जहाँ काम आवै सुई, कहा करे तरवारि।।
(दोहावली, छंद–206)

रहीम ने अपने जीवन में सुख–दुःख बहुत सहे थे। स्वानुभूति से उपजे उनके कथन जीवन की सच्चाई पर आधारित है। रहीम का मानना है कि अपनी संपत्ति न रहने पर विपत्ति में कोई भी सहायता नहीं करता है। जैसे पानी नहीं रहने पर कमल को सूर्य भी नहीं बचा सकता है। सामर्थ्य देखकर ही लोग सहायता करते हैं–

रहिमन निज संपत्ति बिना, कोउ न बिपत्ति सहाय।
बिनु पानी ज्यों जलज को, नहिं रवि सकै बचाय।।
(दोहावली, छंद–210)

रहीम के नीति संबंधी काव्य में जीवनोपयोगी तथ्य मिलते हैं। उन्हें मानव स्वभाव की सूक्ष्म पकड़ थी। एक दोहे में वे कहते हैं कि लाख नेकी करने पर भी दुष्ट इंसान अपनी दुष्टता नहीं छोड़ता है, जैसे सांप को बीन पर राग सुनाओ, और दूध पिलाओ, फिर भी वह अपना मूल स्वभाव डसना नहीं छोड़ पाता है–

रहिमन लाख भली करो, अगुनी अगुन न जाय।
राग सुनत पय पिअतहूँ, सांप सहज धरि खाय।।
(दोहावली, छंद–238)

रहीम के नीति विषयक दोहे ज्ञान की राह दिखाते हुए एक आदर्श जीवन की प्रेरणा देते हैं। रहीम के नीति काव्य में प्रेम, मित्रता, सज्जन, दुर्जन, कटुवचन, संगति, भाग्य और पुरुषार्थ, चिंता, स्वार्थ, महानता, जीवन की नश्वरता आदि विषयों पर दोहे मिलते हैं। रहीम के नीतिपरक दोहों में सामाजिक जीवन को सुखी सुंदर और समुन्नत बनाने के लिए व्यावहारिक सिद्धांतों का निदर्शन है।

भक्ति : जन्म से एक मुसलमान होते हुए भी कवि रहीम ने हिंदू जीवन के अंतर्मन में बैठकर भक्तिपरक मार्मिक काव्य रचना की। यह उनकी विशाल सहृदयता, सांस्कृतिक समन्वय और व्यापक मानवीय बोध का परिचायक है। रहीम मुस्लिम होते हुए भी कृष्ण के भक्त थे। उन्होंने कृष्ण भक्ति में लीन होकर अनेक पद्यों की रचना कीं। रहीम ने अपने काव्य में रामायण, महाभारत, पुराण और गीता जैसे धार्मिक ग्रंथों के कथानकों को उचित स्थान दिया। जो भारतीय संस्कृति की झलक पेश करते हैं। रहीम उस मध्ययुगीन चेतना के रचनाकार हैं जब भक्ति जातिवाद, सांप्रदायिकता से उठकर उदात्त भूमि पर प्रतिष्ठित हो रही थी। रहीम के काव्य में कृष्ण, राम, विष्णु, गिरिजा–ईस, गणेश, सूरजदेव, पवनपुत्र, गंगा, सरस्वती आदि के संदर्भ आते हैं, जो उनकी भक्ति भावना को व्यक्त करते हैं। रहीम नैन–बाण की सांसारिक चोट से बचने के लिए भक्ति को आधार बनाते हुए कहते हैं–

कहि रहीम जग मारियो, नैन बान की चोट।
भगत भगत कोउ बचि गए, चरण कमल की ओट।।
(दोहावली, छंद–26)

'बरवैनायिका भेद' के मंगलाचरण में हाथ जोड़कर वंदना करते हुए लिखते हैं–

बंदौ देवि सरदवा, पद कर जोरि।
बरनत काव्य बरैवा, लगै न खोरि।।

बरवै रहीम का प्रिय छंद था। इसी नाम से उनकी एक रचना भी है। इसके आरंभिक छंदों में रहीम लिखते हैं –

बन्दौं विघन–बिनासन, ऋधि–सिधि–ईस।
निर्मल बुद्धि–प्रकासन, सिसु ससि–सीस।। (1)

सुमिरौं मन दृढ़ करिकै, नन्द कुमार।
जो वृषभान – कुँवरि कै, प्रान–अधार।। (2)
(बरवै छंद–1,2)

इसी क्रम में वे आगे सूरजदेव, गिरिजा–ईस, सुवन समीर, रघुवीर, घनश्याम आदि की स्तुति करते हैं। रहीम की धारणा है कि ईश्वर को प्राप्त करने के लिए अहंकार का त्याग अनिवार्य है। जहाँ अहंकार है वहाँ ईश्वर नहीं है, और जहाँ ईश्वर है वहाँ अहंकार नहीं है। ईश्वर तक पहुँचने का मार्ग बहुत सँकरा है –

रहीमन गली है साँकरी, दूजो ना ठहराहिं।
आपु अहै तो हरि नहीं, हरि जो आपनु नाहिं।। (दोहावली, छंद 183)

रहीम कहते हैं कि इस संसार में रहना अब कठिन हो गया है, क्योंकि सच बोलने वालों को यह दुनिया स्वीकार नहीं करती है और झूठ बोलो तो राम की प्राप्ति नहीं होती है। वे कहते हैं जिन अँखियों ने एक बार हरि के दर्शन कर लिए हों, उन अँखियों के लिए अब सांसारिक सौंदर्य–प्रसाधन व्यर्थ हैं–

अंजन दियो तो किरकिरी, सुरमा दियो न जाय।
जिन आँखिन सों हरि लख्यो, रहिमन बलि बलि जाय।।
(दोहावली, छंद–16)

धार्मिक उदारता के चलते रहीम के मन में सभी धर्मों के प्रति सम्मान की भावना थी। उनके लिए मज़हब की दीवारें कोई मायने नहीं रखती थीं। समस्त भक्ति काव्य की तरह रहीम भी भक्ति में निराकार या साकार की शरण में जाने की बात कहते हैं। रहीम के काव्य में भक्ति की सगुण, निर्गुण, सूफी सभी धाराओं का प्रभाव दिखता है।

शृंगार : रहीम का स्थान हिंदी काव्य–जगत में केवल भक्ति के कारण ही नहीं, वरन् नीति, शृंगार, प्रेम और सरस मार्मिक अनुभूतियों के कारण है। शृंगार मनुष्य की एक सहज, नैसर्गिक वृत्ति है। शृंगार की दृष्टि से रहीम के शृंगारिक दोहे और बरवै अपनी सरसता के लिए सदा स्मृतियों में रहेंगे। रहीम के काव्य में प्रेम और शृंगार का अनूठा समन्वय मिलता है। वे नायिका के रूप–सौंदर्य का शृंगारिक चित्रण इस अंदाज़ में करते हैं –

नैन सलोने अधर मधु, कह रहीम घटि कौन।
मीठो भावे लोन पर, अरु मीठे पर लौन।।
(दोहावली, छंद–114)

रहीम ने प्रस्तुत दोहे में नायिका के नेत्रों और अधरों का सरस शृंगारिक वर्णन प्रस्तुत किया है। 'नगर शोभा' में रहीम ने लोक–जीवन की नायिकाओं का शृंगारिक विनोद पूर्ण चित्रण किया है। इसमें विभिन्न पेशेवाली स्त्रियों का शृंगार सुरक्षित है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं –

परम रूप कंचन बरन, शोभित नारि सुनारि।
मानों साँचे ढारि कै, बिधिना गढ़ी सुनारि।।
(नगर शोभा, छंद 15)

'बरवै नायिका भेद' में काव्यशास्त्र में प्राप्त अनेक प्रकार की नायिकाओं का शृंगारिक वर्णन है। रचना के ग्यारहवें छंद में रहीम एक नायिका के शृंगार के विषय में लिखते हैं–

पहिरति चूनि चुनरिया, भूषण भाव।
नैननि देत कजरवा, फूलनि चाव।।
(बरवै नायिका भेद, छंद–11)

रहीम ने 'बरवै नायिका भेद' में भारतीय गार्हस्थ्य–जीवन के मनोहर शृंगारिक लुभावने चित्र प्रस्तुत किये हैं। वे सर्वसाधारण में विशेष लोकप्रिय हैं। उनमें भारतीय प्रेम–जीवन और शृंगार की सच्ची अभिव्यक्ति हुई है। रहीम के 'मदनाष्टक' में संस्कृत और खड़ी बोली मिश्रित शृंगारिक प्रयोग है।

संयोग शृंगार के साथ रहीम की रचनाओं में वियोग शृंगार का चित्रण भी प्रमुखता से हुआ है। रहीम की 'बरवै' कृति में गोपी–विरह का मार्मिक चित्रण हुआ है। विरह प्रेम की जाग्रत गति है। रात्रि का घना अँधेरा वियोग के दुःख को बढ़ा देता है, लेकिन भादों रात्रि के गहन अंधकार में कभी–कभी जुगनू चमक कर आशा की ज्योति बन मन को ख़ुशी प्रदान कर देते हैं–

विरह रूप धन तम भयो, अवधि आस उद्योत।
ज्यों रहीम भादों निसा, चमकि आज खद्योत।।
(दोहावली, छंद–134)

'बरवै' रचना के तेरहवें छंद में एक गोपी सखी से अपने मन की व्यथा–कथा कहती है –

सावन आवन कहिगे, स्याम सुजान।
अजहुँ न आये सजनी, तरफत प्रान।।
(बरवै, छंद–13)

विरहिणी नायिका के नेत्र हर घड़ी प्रतीक्षा मार्ग में लीन रहते हैं –

जबते मोहन बिछुरे, कुछ सुधि नाहिं।
रहे प्रान परि पलकनि, दृग मग माहिं।।
(बरवै, छंद–66)

रहीम के 'बरवै' में विरह की अभिव्यक्ति गोपियों के माध्यम से व्यक्त हुई है। रहीम का शृंगार वर्णन संयोग और वियोग लोक जीवन से प्रेरित है।

प्रेम और लोक–नीति : मनुष्य के जीवन में विविध प्रकार के भाव–विचार समय–समय पर उत्पन्न होते रहते हैं। इन भावों में सबसे मुख्य भाव प्रेम है। प्रेम सामाजिक जीवन की समरसता का आधार है। प्रेम सांप्रदायिकता, ऊँच–नीच, छोटे–बड़े, अमीर–ग़रीब की संकीर्णतावादी दीवारों को ढहाने की अपूर्व शक्ति रखता है। रहीम प्रेम के मार्ग को जटिल और ज़ोखिम भरा मानते हैं, जिस पर चलने की हर किसी की हिम्मत नहीं होती है। वह मोम के बने घोड़े पर सवार होकर आग पर चलने जैसा है –

रहिमन मैंन तुरंग चढि, चलिबो पावक माँहिं।
प्रेम पंथ ऐसो कठिन, सब कोउ निबहत नाहिं।।
(दोहावली, छंद–226)

रहीम हर स्थिति में प्रेम के निर्वाह की सीख देते हैं। प्रेम के धागे को टूटने से बचाने की बात कहते हैं –

रहिमन धागा प्रेम को, मत तोड़ो चटकाय।
टूटे से फिर ना जुड़े, जुड़े गाँठ पड़ जाय।।
(दोहावली, छंद–207)

रहीम को सामाजिक जीवन की गहरी पकड़ थी। वे हिंदू–मुस्लिम समन्वय, भाई–चारा और एकता के पक्षधर थे। इसलिए वे परस्पर प्रेम के मुक्ताहार की बात करते हैं –

टूटे सुजन मनाइये, जो टूटे सौ बार।
रहिमन फिरि फिरि पोहिए, टूटे मुक्ताहार।।
(दोहावली, छंद–86)

सामाजिक जीवन में समरसता, मित्रता पूर्वक व्यवहार करना, संयम, सहनशीलता, क्षमाशीलता, सत्संग के महत्त्व को लेकर रहीम ने अनेक सार्थक दोहे लिखे हैं।
रहीम का सांसारिक अनुभव बहुत ठोस था। जीवन में आने वाली कटु–मधुर परिस्थितियों ने इनके हृदय–पट पर जो बहुविध अनुभूति रेखाएँ अंकित कर दी थीं। उन्हीं के अकृत्रिम अंकन में इनके काव्य की रमणीयता का रहस्य निहित है। लोक प्रचलित विषयों के चित्रण में रहीम की अभिव्यक्ति बेजोड़ है। एक दोहे में रहीम कहते हैं कि काम पड़ने पर और काम पूर्ण हो जाने पर इंसान का व्यवहार भी बदल जाता है –

काज परे कुछ और है, काज सरे कुछ और।
रहिमन भँवरा के भए, नदी सिरावत मौर।।
(दोहावली, छंद–35)

मनुष्य का जीवन सुख–दुःख, खुशी–गम, उन्नति–अवनति, सफलता– असफलता से संचालित होता है। रहीम कहते हैं कि मनुष्य को जीवन में सब कुछ सहन करना चाहिए। जैसे धरती शीत, धूप और वर्षा सहन करती है –

जैसी परै सो सहि रहै, कहि रहीम यह देह।
धरती ही पर परत है, सीत घाम और मेह।।
(दोहावली, छंद–69)

रहीम मानव मन के सूक्ष्म चितेरे थे। उनका मानना है कि मनुष्य को अपना दुःख मन में ही रखना चाहिए। दूसरों को सुनाने से लोग सिर्फ़ उसका मज़ाक उड़ाते हैं, उस दुःख को कोई बाँटता नहीं है –

रहिमन निज मन की बिथा, मन ही राखो गोय।
सुनि अठिलैहें लोग सब, बाँटि न लैहें कोय।।
(दोहावली, छंद–208)

रहीम जीवन में आने वाली समस्याओं को, सुख–दुःख को समभाव और धैर्य से ग्रहण करने की सलाह देते हैं। उनका मानना है कि समय आने पर हर काम बनता है, जैसे समय आने पर ही वृक्ष में फल लगता है, और समय के अनुकूल ही वह झड़ जाता है –

समय पाय फल होत है, समय पाय झरि जात।
सदा रहै नहिं एक सी, का रहीम पछितात।।
(दोहावली, छंद–261)

रहीम की दोहावली से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उन्होंने संस्कृत के नीतिशतक, चाणक्य नीति, विदुर नीति आदि ग्रंथों का विधिवत् अध्ययन–मनन किया था। रहीम की 'दोहावली' में नीतिपरक दोहों की प्रधानता है। जिसमें राजनीति, लोकनीति, अध्यात्म, भक्ति, प्रकृति और जीवनानुभव पर केंद्रित दोहे हैं।

भाषा : भाषिक संप्रेषण की दृष्टि से रहीम एक श्रेष्ठ कवि हैं। रहीम ने जनसाधारण की बोलचाल की तत्कालीन भाषा में काव्य–रचना की और अपूर्व लोकप्रियता प्राप्त की। उनके पास असाधारण संप्रेषण क्षमताओं को उद्घाटित करती भाषा का आदर्श है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल भाषा की दृष्टि से रहीम को तुलसीदास के समकक्ष पाते हैं – "भाषा पर तुलसी का सा ही अधिकार हम रहीम का भी पाते हैं।"[16]
रहीम बहुभाषाविद् थे। उन्होंने अपने काव्य में हिंदी, संस्कृत, फ़ारसी काव्य–भाषाओं का स्वतंत्र प्रयोग किया है, और हिंदी काव्य–भाषा के अंतर्गत ब्रजभाषा, अवधी और खड़ी बोली को आधार बनाया है। रहीम के 'दोहे' ब्रजभाषा में 'बरवै' अवधी में और 'मदनाष्टक' रचना खड़ी बोली में रचित है। रहीम के काव्य में भाषा–वैविध्य, छंद वैविध्य और विषय वैविध्य है। रहीम की भाषा गंगा–जमुनी तहजीब वाली है। इस दृष्टि से रहीम दूसरे कवियों की तुलना में अधिक हिंदी कवि हैं।
रहीम की काव्य–भाषा में लोक रंग की रंग–बिरंगी छटाएँ भी दिखती हैं। रहीम की काव्य–भाषा में आत्मीयता का जो पुट है वह इसलिए भी है कि रहीम के यहाँ भाषा अनुभव का अंग बन गई है, वह मात्र अभिव्यक्ति का माध्यम भर नहीं है। अबुल फ़ज़ल जैसे विद्वान भी रहीम के भाषा–ज्ञान के प्रशंसक थे।

निष्कर्षः

रहीम एक महान व्यक्तित्व और कृतित्व के स्वामी थे। कवि, सेनापति, प्रशासक, कूटनीतिज्ञ, संरक्षक, बहुभाषाविद् होने के साथ–साथ वे उदार, दानी, लोकोपकारी, सांस्कृतिक समन्यवादी व्यक्ति थे। रहीम ने अपनी शूरवीरता से राजदरबार में, दानवीरता से जनसाधारण में, विद्वता से विद्वानों में, कूटनीतिज्ञता से बादशाहों में अपनी एक अलग, अपूर्व, लोकप्रिय और विश्वसनीय छवि कायम की थी। उनके उपदेश और सीख के दोहे तो अपढ़ जनता में भी अपना स्थान बनाने में सफल हैं। आज के समय में हम रहीम के व्यक्तित्व और कृतित्व से प्रेरणा पाकर बहुत कुछ सार्थक सीख सकते हैं। रहीम जीवन की सीख के सच्चे प्रतिबद्ध कवि हैं।

संदर्भ : आधार ग्रंथ : मिश्र, सत्यप्रकाश संपा॰ (1994, प्रथम संस्करण), रहीम रचनावली, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

1. Edited by Rajeev Bhargava. Secularism and Its critics, Oxford University Press; c1998. p. 476.
2. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र (2056 वि॰, चौंतीसवां संस्करण), हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पृष्ठ–108
3. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ–119

4. स्नातक, विजयेन्द्र (1990, प्रथम संस्करण), रहीम, साहित्य अकादमी, दिल्ली, पृष्ठ–22
5. वही, पृष्ठ–22
6. वर्मा, धीरेन्द्र संपा॰ (संवत् 2022, प्रथम संस्करण), हिंदी साहित्य कोश, भाग–2, पृष्ठ–483
7. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ–120
8. वर्मा, धीरेन्द्र संपा॰, हिंदी साहित्य कोश, भाग–2, पृष्ठ–483
9. द्विवेदी, हजारीप्रसाद (1995), हिंदी साहित्य उद्भव और विकास, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ–116
10. डॉ॰ नगेन्द्र व डॉ॰ हरदयाल, (2009), हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स, नोएडा, पृष्ठ–229
11. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ–119
12. वही, पृष्ठ–120
13. चतुर्वेदी, रामस्वरूप (1999), हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ–52
14. मिश्र, सत्यप्रकाश संपा॰ (1994), रहीम रचनावली, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ–67
15. डॉ॰ अमरनाथ, (2012, पहला छात्र संस्करण), हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ–209
16. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ–120